International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 08 August- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

बुलाकी शर्मा के साहित्य में सांस्कृतिक अवमूल्यन एवं धार्मिक विडम्बनाएँ :

डॉ संगीता शर्मा ,
एसोसिएट प्रोफेसर ,हिंदी ,
दयानंद कॉलेज , हिसार

शोध सारांश

किसी भी समाज की वास्तविक पहचान उसके लोक जीवन में ही अंतर्निहित मानी गई है। जिस समाज का लोकजीवन जितना समृद्ध, सभ्य–शिष्ट होता जाता है उसकी संस्कृति एवं साहित्य में उतना ही परिष्कार झलकने लगता है। सांस्कृतिक मूल्यों में आनुपातिक विकास और ह्रास को क्रमशः सांस्कृतिक उत्थान एवं सांस्कृतिक अवमूल्यन के रूप में देखा जाता है। 'संस्कृति' शब्द की व्युत्पत्ति 'कृ' मूल धातु में 'सम्' उपसर्ग के संयोग से हुई है जिसका सामान्य अर्थ परिष्करण, परिमार्जन की क्रिया अथवा सम्यक्रूपेण निर्माण से है। विभिन्न विषयों के निष्णात् विषय विशारदों में 'संस्कृति' शब्द को व्यापक रूप में परिभाषित किया है। लैटिन भाषा की मूल क्रिया (धातु) 'कोलर' से निष्पन्न 'कुल्टरा' एवं अंग्रेजी भाषा के शब्द 'कल्चर' को 'संस्कृति' शब्द का समानार्थक माना गया है। डॉ. मंगलदेव शास्त्री के अनुसार ''किसी भी देश या समाज के विभिन्न जीवन व्यापारों या सामाजिक सम्बन्धों में मानवता की दृष्टि से प्रेरणा प्रदान करने वाले आदर्शों को ही संस्कृति कहते है।''1 डॉ. आर.सी. मजूमदार की दृष्टि में ''संस्कृति सामाजिक उपलब्धि ही नहीं, प्रत्युत नैतिक, आध्यात्मिक तथा मानसिक उपलब्धि भी है।''2 संस्कृति की अवधारणा इतनी व्यापक है कि ''मानवीय जीवन–विज्ञान (ह्युमन बायोलॉजी) मनोविज्ञान अथवा मानव–समाज, इनमें से एक भी शास्त्र स्वतंत्र रूप से उसकी यथार्थता की व्याख्या के लिए असमर्थ है। ए.एल.क्रोबर के अनुसार समाज सहायक अंग के रूप में संस्कृति से सम्बद्ध रहता है तथा उसके साथ ही संस्कृति का वाहक भी है। सामाजिक अभिव्यक्तियों की तुलना में संस्कृति ही मानव वैशिष्ट्य के निर्धारण में अधिक समर्थ हैं।''3 इस प्रकार कहा जा सकता है कि संस्कृति में मानव क्षमताओं की अभिव्यक्ति का प्रचुर सामर्थ्य है और सांस्कृतिक अध्ययन किसी एक ही विषय विशेष की परिधि में सीमित नहीं है। हिन्दी व्यंग्य साहित्य में सांस्कृतिक यथार्थ का सजीव निरूपण किया गया है।

मूल शब्द : निष्पन्न 'कुल्टरा',क्षमताओं की अभिव्यक्ति, परिष्करण, परिमार्जन, प्रत्युत्तर ,तथाकथित

आधुनिक युग में सांस्कृतिक अवमूल्यन की ओर ही संकेत करते हुए डॉ. लक्ष्मीकांत पाण्डे का तो यहां तक मानना है कि– ''छठे दशक के पश्चात् व्यंग्य के विकास का मूल कारण जीवन मूल्यों में ह्रास है। ह्रासोन्मुखी समाज का सर्वाधिक प्रभावशाली उपचार व्यंग्य है। यही कारण है कि जहां संवेदनामूलक विधाएं प्रभावशून्य हुई, वहीं सामाजिक उपचार में व्यंग्य ने एंटीबायोटिक का कार्य किया क्योंकि व्यंग्य

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 08 August- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

सत्य का प्रस्तोता होता है।''4 बुलाकी शर्मा के व्यंग्य लेखन के बारे में भी यह बात अक्षरक्षः लागू होती है।

बुलाकी शर्मा ने अपने व्यंग्य लेखों में संस्कृति के विभिन्न उपादानों के संदर्भ में तथाकथित 'उत्तर संस्कृति', 'अपसंस्कृति' के प्रभावों को बड़ी सूक्ष्मता के साथ रेखांकित किया है।

'इनबॉक्स कथा' शीर्षक से प्रस्तुत चार लघु व्यंग्य कथाओं में बुलाकी शर्मा ने 21 वीं सदी की उत्तर संस्कृति की झलकियाँ दर्शायी है। दूरभाष पर मित्रता स्थापित करने वाली लड़की को जब लेखक ने मात्र 500 रूपये की आर्थिक सहायता देने से इनकार किया तो लड़की का प्रत्युत्तर था– ''फिर काहे के राइटर हो तुम..... मेरे जैसी चार्मिंग..... यंग..... लड़की की हेल्प नहीं कर सकते..... ब्लडीफूल..... अभी ब्लॉक करती हूँ राइटर के बच्चे को.....।''5 अर्थात् आर्थिक मानदण्ड पर खरा नहीं उतरने वाला 'राइटर का बच्चा' 'ब्लडीफूल' की उपाधि भी मुफ्त में प्राप्त करने के लिए विवश है। स्त्री–विमर्श की दृष्टि से इसे 'स्वच्छन्द व्यवहार' की श्रेणी में रखा जा सकता है।

दूसरी लघुकथा में जब लेखक कहता है– 'सॉरी, मैं रिचार्ज नहीं करा सकता....।' तब दूरभाष पर युवती की बददुआ इस प्रकार मिलती है– ''तुम तो मन से भी बूढ़े निकले..... नरक मिलेगा तुमको..... यह शाप है मेरा.....।''6 'उत्तर संस्कृति' के इस चरम युग में एक रिचार्ज की रिक्वेस्ट को टालने के फलस्वरूप आधुनिक नारी–शक्ति के इस अभिशाप का कितना घातक प्रभाव समाज पर पड़ सकता है, यह तो सहज ही अनुमेय है।

तीसरी लघु व्यंग्य कथा दर्शाती है कि किस प्रकार मोबाईल पर लड़की बनकर दूसरी लड़कियों से चैटिंग करते हुए उनकी निजता का अपहरण किया जाता है। प्रतिपक्ष के मोबाइल से गूंजती यह आवाज किसी भी पाठक का दिल दहलाने के लिए काफी है– ''हाँ जी..... तुम भी मेरी तरह हो सरजी..... इनबॉक्स में लड़कियों से चैटिंग करके मजे लेने वाले.....।''7

इस प्रकार इक्कीसवीं सदी में डिजिटल क्रांति का आश्रय लेकर तथाकथित उत्तर आधुनिक सोच रखने वाली पीढ़ी सांस्कृतिक मूल्यों को ताक पर रखे चली जा रही है।

हमारे सामाजिक जीवन में 'मूल्यों की अवधारणा की गहन पड़ताल करते डॉ. अल्पना भटनागर ने लिखा है– ''जीवन मूल्य जीवन के प्रति एक दृष्टिकोण है, वैचारिक इकाई है। मनुष्य का व्यक्ति, समाज और वस्तु के साथ एक वैचारिक सम्बन्ध है– जिसके निर्माण में मनुष्य की मूल प्रवृत्तियाँ और उसके समाजीकरण के प्रमुख तत्व–आदर्श, नार्म, परम्पराएँ, नैतिकता और तथ्य आदि का योगदान होता

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 08 August- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

है।''8 आधुनिक युग में बदलते हुए परिवेश में सामाजिक मूल्यों में आ रहे बदलावों को साहित्यकारों ने बड़ी सूक्ष्मतापूर्वक देखा–परखा है।

श्री बुलाकी शर्मा ने भी सभी व्यंग्य रचनाओं में बदलते सामाजिक मूल्यों का बेबाक चित्रण किया है। 'मानव एक सामाजिक प्राणी है' इस प्रसिद्ध सूक्ति को ध्यान में रखते हुए व्यंग्यकार ने अपने लेखों में बदली हुई परिस्थितियों में समाज में व्यक्ति–विशेष की बनती–बिगड़ती छवियों पर प्रकाश डालते हुए 'बदलते सामाजिक मूल्यों' की ओर ही संकेत किया है। 'दुख का भूमण्डलीकरण, लेख में उन्होंने लिखा भी है– ''साहित्यकार स्वभाव से आम नहीं, खास होता है। आमजन सुख के साथी बनते है, दुःख के नहीं। सुखी व्यक्ति के इर्द–गिर्द स्वार्थ पूर्ति की आकांक्षा में लोगों का हुजूम भिनभिनाता है। दुःख से मुक्त हो सुखी बने व्यक्ति का तुरन्त कायाकल्प हो जाता है और वह कालिया से कालूरामजी बन जाता है। ब्लैक मार्केटिंग, मिलावट, रिश्वत, भ्रष्टाचार आदि किसी भी 'टेक्ट' से कोई दुखी से सुखी बने, उसका आदर–सत्कार शुरू हो जाता है। xxx साहित्यकार साथी को जोड़तोड़ से यदि पुरस्कार मिल जाए तो वह उसके सुख में शामिल नहीं होगा। वह उसके सुख में अपना साहित्यिक दुख ढूंढेगा।''9 इसी प्रकार विभिन्न लेखों में व्यंग्यकार ने वर्तमान युग में मानवीय चरित्रों की सामाजिक सोच में आ रहे नकारात्मक बदलावों पर व्यंग्य साधा है।

आज के दौर में सिद्धांतवादी और आदर्शवादी व्यक्तियों को समाज में 'पॉजिटिव सोच वाला' मानने की परम्परा विलुप्तप्राय है। 'बहुत दुखी है वे' शीर्षक लेख में आदर्शवादी मास्टरजी की गरीबी और दलाल गुप्ताजी के व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन किया है। यथा– ''गुप्ताजी हमेशा पॉजिटिव सोच रखते हैं यानी अपने हित की सोच रखते हैं। किसी को लाख रूपये का नुकसान हो जाए उन्हें परवान नहीं, यदि इससे उनको सौ रूपये का लाभ हो रहा हो तो! इसी पॉजिटिव सोच ने उन्हें कहां से कहां पहुंचा दिया है। xxx उनके अनेक धंधे थे। दलाली का धंधा था खास।..... अब तो वे किसी का भी कोई भी काम किसी से भी कराने की सामर्थ्य रखते हैं दलाली के सहारे।''10 इसमे निहित व्यंग्यार्थ यह है कि आज के दौर में व्यष्टि–विकास की सोच को 'पॉजिटव' माना जाता है जबकि 'समष्टि–विकास' के लिए चिंतनशील मास्टरजी जैसे गरीबों की सामाजिक–दृष्टि को गौण माना जाने लगा है। यही तो बदलते सामाजिक मूल्यों का असर है।

बुलाकी शर्मा के विभिन्न लेखों में नर–नारी सबंधों को लेकर समाज में आए बदलावों को रेखांकित किया गया है। प्रौढ़ पीढ़ी के रचनाकार और आम आदमी भी अपने किशोरावस्था के अथवा यौवनावस्था के सफल अथवा असफल प्रेम सम्बन्धों की स्मृतियाँ ढोते रहते हैं। इनके लेखों में स्त्री अस्मिता के प्रश्नों को भी बड़ी संजीदगी से रखा गया है। यह सही बात है कि आज के युग में स्त्री–विमर्श की अनेक धाराएँ समाज और खासकर साहित्य–समाज में प्रवाहमान है। बुलाकी शर्मा की

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 08 August- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

रचनाएं इनका निर्मल सलिल ग्रहण करती हुई स्त्री–विमर्श के संकुचित दायरों पर भी व्यंग्य साधती है। एक पत्नीव्रती आदर्श पति को निस्संदेह 'श्रीमतीजी' के अनुकूल आचरण करना चाहिए क्योंकि यह बात समकालीन 'स्त्री–विमर्श' के भी अनुकूल है परन्तु क्या बीमार मां को नकारते हुए पत्नी के साथ शॉपिंग पर जाना, मजदूरिन मां को छोड़कर सामाजिक स्टेटस के लिए कॉलोनी में अलग जाकर बसना, बूढ़े माँ–बाप को छोड़कर बीवी के साथ बारहमास बसंत मनाने के लिए पलायन कर जाना, बाखड़ी (बांझ) गाय की तरह कंपायमान देहधारी वृद्धजन को लावारिस एवं बेघर कर देना आदि के पीछे भी किसी 'स्त्री' का तो हाथ नहीं है? व्यंग्यकार ने ऐसा ही विभिन्न सामाजिक समस्याओं के लिए उत्तरदायी 'नर–नारायण' अथवा 'नारी तू नारायणी' के समक्ष 'अजब बीमारी : गजब उपचार' शैली के व्यंग्य–प्रश्न (यक्ष–प्रश्न) रखे हैं।

बुलाकी शर्मा की एक भी रचना ऐसी नहीं होगी जिसमें किसी न किसी प्रकार से उन्होंने बदलते सामाजिक मूल्यों पर व्यंग्य–ब्रह्मास्त्र का प्रयोग नहीं किया हो। इनके व्यंग्य लेखों में सामाजिक प्रतिबद्धता सर्वत्र कूट–कूट कर भरी पड़ी है। इनकी रचनाओं में दान–पुण्य की परम्परा के प्रति आधुनिक दानदाताओं की बदली हुआ मनोवृत्ति का परिचय मिलता है यथा 'डरता हूं दान–पुण्य करते' शीर्षक लेख। लोग मंदिर जाने के मूल उद्देश्य को छोड़कर प्रेमी–प्रेमिका मिलन की आकांक्षा रखने लगे है। समाज सेवा के मायने तो बिलकुल ही उलट गये हैं। राजनेता अपनी जनता से लेते ही रहना चाहते हैं। 'देने वाला दाता ईश्वर' शीर्षक लेख में 'मतदाता' देने वाला होने के कारण राजनेता के लिए ईश्वरतुल्य है जो बदले में कभी कुछ नहीं चाहता है। बुलाकी शर्मा विभिन्न नूतन अवधारणाओं को भी बड़ी सहजता से अपनी रचनाओं में उतार लेते हैं। 'दुःख का भूमण्डलीकरण' लेख में उन्होंने संकेतों में बताया है कि आज के दौर में सामाजिक मूल्य इतने बदल चुके है कि दुःख का भूमण्डलीकरण होना अनिवार्य–सा हो गया है।

सैद्धांतिक दृष्टि से भारतीय सनातन संस्कृति में 'धर्म' को चारों पुरुषार्थों में सर्वप्रथम स्थान दिया गया है परन्तु वर्तमान में धार्मिक क्षेत्र में अनेक विसंगतियां भरी पड़ी है। 'धर्म' अपने आप में एक अत्यन्त ही उदात्त अवधारणा है परन्तु विभिन्न कारणों से भारत में धार्मिक जीवन रूढ़ियों से ग्रस्त होता चला गया है। हिन्दी साहित्य की विविध रचनाओं में इन धार्मिक विडम्बनाओं की ओर संकेत किया गया है। हिन्दी व्यंग्य उपन्यासों की पृष्ठभूमि और परम्परा का विश्लेषण करते हुए डॉ. नन्दलाल कल्ला लिखते हैं– ''धार्मिक जीवन में रूढ़ियाँ और अंधविश्वास स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व व्याप्त थे, परन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षा और आधुनिक सभ्यता की तेजी से आधुनिक समाज में विकास के परिणामस्वरूप इस स्थिति में विशेष सुधार नहीं हुआ। धर्मान्धता की जड़ें स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व जितनी गहरी थी, उतनी गहरी आज भी हैं। आज भी धर्म के क्षेत्र में धार्मिक ठेकेदारों की तूती बोलती है। धर्म की आड़ में

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 08 August- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

पनपने वाली साम्प्रदायिकता ने स्थिति को और भी अधिक भयंकर बना दिया, धार्मिक स्थल अब आतंकवाद, अनाचार और दुराचार के अड्डे बने हुए हैं।''11 समकालीन हिन्दी व्यंग्यकारों ने ऐसी ही अन्यान्य तमाम धार्मिक विडम्बनाओं की तह तक पहुंचने का सार्थक प्रयत्न किया है।

बुलाकी शर्मा ने अपने व्यंग्यलेखों में विभिन्न छोटी से छोटी एवं बड़ी से बड़ी धार्मिक रूढ़ियों, कुप्रथाओं, पाखण्ड, आडम्बरों, अंधविश्वासों एवं विभिन्न वितडण्ताओं पर करारे प्रहार किए हैं। इनके कतिपय व्यंग्य लेखों के शीर्षकों में तो स्पष्टतया धार्मिक विसंगतियों की ओर संकेत किया गया है– 'राज करे ज्योतिष', 'प्रभु की लीला प्रभु ही जाने', 'टेंशन फ्री रखें भगवान को, 'डरता हूं दान–पुण्य करते', 'बजरंगबली की डायरी', 'कथा अनुकम्पा', 'भई भक्तन की भीड़', 'देवताओं फूल बरसाओ', 'देवी लक्ष्मी और साहित्यकार' आदि। इनके अतिरिक्त भी विभिन्न लेखों में बुलाकी शर्मा ने प्रसंगवश किसी न किसी धार्मिक विडम्बना की ओर दृष्टिपात किया ही है।

'राज करे ज्योतिष' शीर्षक व्यंग्यलेख में बुलाकी शर्मा ने विभिन्न उदाहरणों के साथ भारतीय समाज की अंधश्रद्धा पर व्यंग्य किए है– ''ज्योतिष की लोकप्रियता का कोई जवाब नहीं है। कोई भी समाचार पत्र ऐसा नहीं मिलेगा, जिसमें राशिफल नहीं छपा हो और कोई ऐसा टीवी चैनल नहीं होगा जिसमें ज्योतिष से संबंधित प्रोग्राम नहीं आता हो। अपने को पक्का प्रगतिशील या जनवादी बताने वाले भी इसमें विश्वास करते देखे गए हैं किन्तु 'इमेज' को बनाए रखने के लिए छुप–छुप कर राशिफल पढ़ते हैं, अतिविश्वासी से जन्म कुण्डली दिखलाते हैं ताकि यह रहस्य सार्वजनिक न हो।''12

'बाप रे ! एक महापुरुष के सौ करोड़ संतानें' शीर्षक व्यंग्य लेख में बुलाकी शर्मा ने हिन्दू साध्वियों द्वारा अपने प्रवचनों में अधिक संताने पैदा करने के संदेश दिए जाने पर चुटकियाँ ली है। शादी से ना–नुकर करने वाला पात्र 'धार्मिक बेटा' अपनी मम्मी को समझाता है– ''देखों मम्मा, भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि कर्म करो, फल की चिंता मत करो। मैंने धार्मिक ग्रंथ पढ़े हैं। मुझे इनमें आनंद आता है। मैंने 'श्रीमद्भागवत' का पूरे मनोयोग से पाठ किया है। इसके नवम् स्कन्ध में बताया गया है कि जिस वंश में भगवान श्रीकृष्ण ने अवतार लिया था, उसी यदुवंश में शशबिन्दु नामक बहुत पराक्रमी और यशस्वी महापुरुष का जन्म हुआ था। उनके दस हजार रानियां थी और प्रत्येक रानी के एक–एक लाख संताने पैदा हुई थी। मतलब महाराजा शशबिन्दु के अकेले के सौ करोड़ संताने थीं। हमारे भारतवर्ष में ऐसे पराक्रमी महापुरुष पैदा हो रखे हैं। हमारे ये राजनेता, साधु–साध्वियां यदि शशबिन्दु महाराज से प्रेरणा लेने की बात कहने लगेंगे तब क्या होगा? यही तो मेरी टेंशन है।''13

आज के संदर्भ में जहां 'बच्चे दो ही अच्छे' नारे को आत्मसात् करने की जरूरत है, वहीं हिन्दू साध्वियों के ऐसे संदेशों का समाज पर क्या प्रभाव होगा? यही तो साहित्यकार की चिंता है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 08 August- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

भारत में 'वास्तुशास्त्र' के प्रति जनता की गंभीर अनुरक्ति पर व्यंग्य कसते हुए बुलाकी शर्मा ने 'हम नहीं बदलेंगे' लेख में तेलंगाना में प्रस्तावित नए सचिवालय की खबर पर चुटकियाँ लेते हुए लिखा है– ''तेलंगाना के मुख्यमंत्री ने स्वयं बताया है कि वास्तुदोष की वजह से सचिवालय को शिफ्ट किया जाएगा। इस खबर से हमें हार्दिक संतोष मिला है। जब जनता द्वारा चुनी गई सरकार वास्तुशास्त्र में यकीन करती है तब हम जैसे आमजन करते हैं तो कहां गलत है।''14

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि व्यंग्यकार ने ज्योतिष, वास्तुशास्त्र एवं धर्मग्रंथों में अतिशयोक्तिपूर्ण कथानकों के प्रति आम आदमी की निराधार श्रद्धा को लक्ष्य बनाते हुए पुनर्विचार हेतु अपने पाठकों के समक्ष चटखारेदार व्यंग्य चित्र प्रस्तुत किए है। बुलाकी शर्मा का मानना है कि धर्म में अस्पृश्यता का कोई ठोस आधार नहीं है। 'बजरंगबली की डायरी' शीर्षक लेख में एक मंदिर में मूर्ति के ही सामने असहाय पड़े पिटाई खाये हुए अछूत की दीनदशा को देखकर स्वयं बजरंगबली को विचार करना पड़ा– ''मैं क्रोध से पागल हो गया। मगर चाहकर भी कुछ नहीं कर सका। मैं शक्तिशाली कहला कर भी निर्बल हूँ, असहाय हूँ। पत्थर की मूर्ति जो हूँ।''15

यहाँ प्रस्तर–प्रतिभा के पूजन पर भी सवाल उठाया गया है। व्यंग्यार्थ यह भी है कि जब पत्थर की मूर्ति भी किसी अछूत की दीनहीनदशा को अनुभूत कर रही है, वहीं तथाकथित उच्च वर्ग के लोग निम्न वर्ग की दीनता के बारे में क्यों नहीं सहानुभूतिपूर्वक विचार कर रहे हैं?

मूर्ति पूजा के अनौचित्य पर व्यंग्यकार ने अन्य लेखों में भी व्यंग्य लिखे हैं। 'प्रभु की लीला प्रभु ही जाने' शीर्षक लेख में बुलाकी शर्मा ने मध्यप्रदेश के सागर जिले के केसली गांव में जैनमंदिर से चोरी करने वाले प्रेमसिंह राजगौड़ की गिरफ्तारी की खबर को आधार बनाकर महँगी मूर्तियों पर बेशकीमती गहने आभूषण चढ़ाये जाने की परम्परा पर करारे व्यंग्य किए हैं। यथा– ''प्रगतिशील सोच रखने वाले उसकी पैरोकारी करते कह देंगे कि उसने कोई गलती नहीं की। जब भगवान ने उसकी प्रार्थना नहीं सुनी तो गुस्से में उसने बदला लेने के लिए मंदिर में चोरियाँ करके अपने अस्तित्व को सिद्ध किया कि देख प्रभु ! मैं तुम्हारे आभूषण ले जा रहा हूँ। रोक सके तो रोक ले!''16 यहाँ हमें स्वामी दयानंद का स्मरण हो आता है। बचपन में मूलशंकर (स्वामी दयानंद) ने मूर्ति से मिठाई ले जाते हुए मूषक को देखकर मूर्तिपूजा को अनावश्यक मान लिया था। बुलाकी शर्मा ने भी यहां सर्वशक्तिमान प्रभु की एक प्रतिमा की अशक्तता की ओर ही व्यंग्य किया है। आज के वैज्ञानिक युग में भी अनेक लोग धार्मिक तंत्र–मंत्र–यंत्र आदि के द्वारा अपनी बीमारी के उपचार का प्रयत्न करते हैं। आधुनिक भौतिकवादी युग में अधिकांश नर–नारी अपने शारीरिक सौष्ठव और सामर्थ्य को अपेक्षाकृत बढ़ाने की लालसा में अनजाने में ही 'गुप्तरोग' की मानसिकता से ग्रस्त हो जाते हैं। बुलाकी शर्मा ने अपने लेख 'गुप्त रोग के बहाने..... !' में इसी हीनग्रंथि और इससे जुड़ी धार्मिक विसंगतियों पर लिखा है– ''गुप्त रूप से बहुत कुछ होता है

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 12 Issue 08 August- 2022
ISSN: 2249-7382 | Impact Factor: 8.018|
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

क्योंकि हरेक कोई न कोई गुप्त रोग से पीड़ित है। उस रोग से मुक्ति के लिए कोई पंडितों से गुप्तस्थल पर गुप्त रूप से अनुष्ठान करवाता है, कोई किसी ज्योतिषी या तांत्रिक के पास जाता है। आप भी अपने गुप्त रोगों का किस रीति या किस चिकित्सक–पंडित–ज्योतिषी–तांत्रिक से इलाज करा रहे हैं, कतई जानना नहीं चाहूंगा क्योंकि मामला गोपनीयता का है, उसकी आप भी रक्षा करें और मैं भी।''17

निष्कर्ष

बुलाकी शर्मा ने वर्तमान युग में संकीर्ण धार्मिकता पर भी सवाल खड़े किए हैं। रामायण में शबरी (भीलनी) का उल्लेख है जिसने प्रभु श्रीराम को मीठे बेर खिलाने की चाहत में भूलवश चख–चखकर जूठन के बेर ही खिला दिए थे। आज के युग में व्यंग्यकार को परिस्थितियां बदली हुई प्रतीत होती है– ''किन्तु आज का युग इतना राममय है कि कोई भक्त–शिरोमणि शबरी अपने प्रभु राम को झूठे बेर खिलाने का दुस्साहस नहीं कर सकती। श्रीराम स्वयं चाहकर भी उसके बेर नहीं खा सकते क्योंकि अब तो शबरी से भी ज्यादा भक्तिभाव वाले पाए जाते हैं।''18 व्यंग्यकार का आशय यह है कि हिन्दू धर्म में व्याप्त ऊँच–नीच का भेदभाव अभी भी कायम है और इस पौराणिक आख्यान का महत्त्व केवल कथावाचन तक ही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1 शास्त्री, डॉ. मंगलदेव, भारतीय संस्कृति का विकास, वैदिक धारा, पृ. 03
2 मजूमदार, एन. इन्ट्रोडक्शन टु सोशल एन्थ्रोपोलोजी, अध्याय–2
3 डॉ. बहादुरसिंह – हिन्दी साहित्य का इतिहास : गद्य–पद्य विकास परम्परा, पृ. 138
4 पाण्डे, लक्ष्मीकांत – हिन्दी व्यंग्य एवं व्यंग्यकार, भूमिका से (बहा. 618)
5 शर्मा, बुलाकी – टिकाऊ सीढ़ियां उठाऊं सीढ़ियां, पृ. सं. 125
6 शर्मा, बुलाकी – टिकाऊ सीढ़ियां उठाऊं सीढ़ियां, पृ. सं. 126
7 शर्मा, बुलाकी – टिकाऊ सीढ़ियां उठाऊं सीढ़ियां, पृ. सं. 127
8 भटनागर, डॉ. अल्पना – भारवि, माघ एवं श्रीहर्ष के महाकाव्यों में अभिव्यंजित जीवन मूल्य, पृ. 21
9 शर्मा, बुलाकी, रफूगीरी का मौसम, पृ. सं. 16
10 शर्मा, बुलाकी – टिकाऊ सीढ़ियां उठाऊ सीढ़ियां, पृ. सं. 36
11 कल्ला, डॉ. नन्दलाल, हिन्दी व्यंग्य उपन्यास : सिद्धान्त और विकास, पृ. 47
12 शर्मा, बुलाकी – आप तो बस आप ही है, पृ. सं. 13
13 शर्मा, बुलाकी – आप तो बस आप ही है, पृ. सं. 17–18
14 शर्मा, बुलाकी – आप तो बस आप ही है, पृ. सं. 24
15 शर्मा, बुलाकी – दुर्घटना के इर्द–गिर्द, पृ. सं. 31
16 शर्मा, बुलाकी – आप तो बस आप ही है, पृ. सं. 33
17 शर्मा, बुलाकी – आप तो बस आप ही है, पृ. सं. 92
18 शर्मा, बुलाकी – पांचवां कबीर, पृ. सं. 34–35